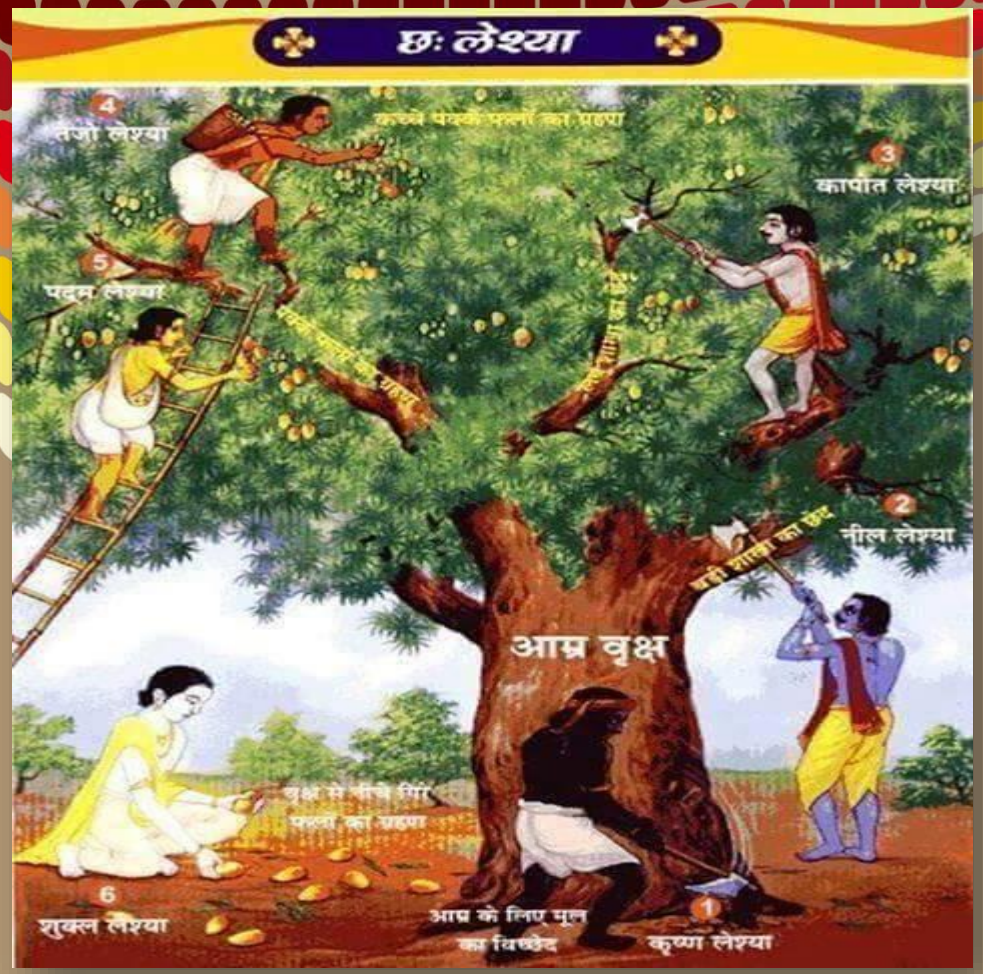

लेश्या मार्गणा

Presentation Developed By :
Smt Sarika Vikas Chhabra

लिंपइ अप्पीकीरइ, एदीए णियअपुण्णपुण्णं च।
जीवो त्ति होदि लेस्सा, लेस्सागुणजाणयक्खादा॥489॥

⌘ अर्थ - जीव नामक पदार्थ जिसके द्वारा अपने को पाप और पुण्य से लिप्त करता है, अपना करता है, निज संबंधी करता है वह लेश्या है, ऐसा लेश्या के लक्षण को जाननेवाले गणधरादिकों ने कहा है ॥489॥

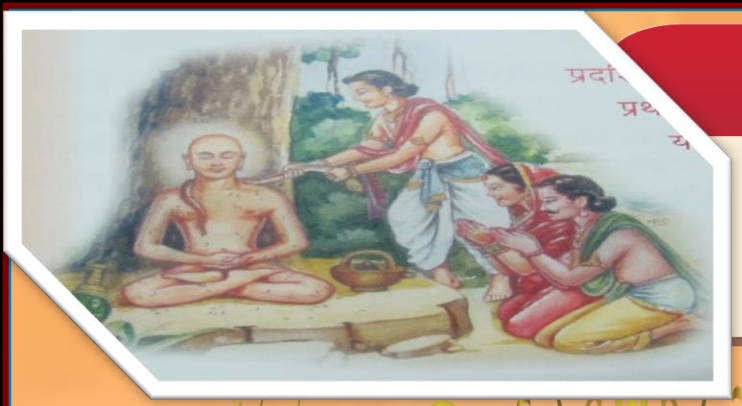

लेश्या किसे कहते हैं?

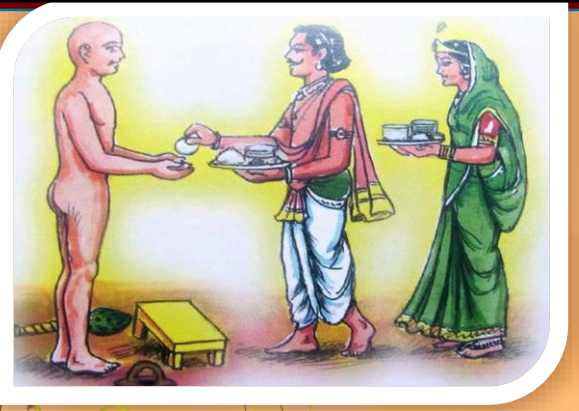

जिसके द्वारा जीव पुण्य और पाप से स्वयं को लिप्त करता है, वह लेश्या है ।

निरुक्ति से लेश्या ?

‘लिंपति एतया’ इति लेश्या=
जिसके द्वारा जीव स्वयं को कर्म से लिप्त करता है, वह लेश्या है ।

जोगपउत्ती लेस्सा, कसायउदयाणुरंजिया होई।
तत्तो दोण्णं कज्जं, बंधचउक्कं समुद्दिट्ठं॥490॥

- अर्थ - मन, वचन, कायरूप योगों की प्रवृत्ति वह लेश्या है। योगों की प्रवृत्ति कषायों के उदय से अनुरंजित होती है।
- इसलिये योग और कषाय इन दोनों का कार्य जो चार प्रकार का बंध है, वह लेश्या का ही कार्य कहा है। ॥490॥

कषाय के उदय से अनुरंजित योगों की प्रवृत्ति लेश्या है ।

- कषाय से
  - स्थिति बंध
  - अनुभाग बंध
- योग से
  - प्रकृति बंध
  - प्रदेश बंध

अतः दोनों के मेलरूप लेश्या से चारों प्रकार का बंध होता है ।

णिद्देसवण्णपरिणाम-संकमो कम्मलक्खणगदी य।
सामी साहणसंखा, खेत्तं फासं तदो कालो॥491॥
अन्तरभावप्पबहु, अहियारा सोलसा हवंति त्ति।
लेस्साण साहणट्ठं, जहाकमं तेहिं वोच्छामि॥492॥

⌘ अर्थ - निर्देश, वर्ण, परिणाम, संक्रम, कर्म, लक्षण, गति, स्वामी, साधन, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पबहुत्व ये लेश्याओं की सिद्धि के लिये सोलह अधिकार परमागम में कहे गये हैं। इनके ही द्वारा आगे क्रम से लेश्याओं का निरूपण करेंगे ॥491-492॥

लेश्या के वर्णन के 16 अधिकार

1. निर्देश	2. वर्ण	3. परिणाम	4. संक्रम
5. कर्म	6. लक्षण	7. गति	8. स्वामी
9. साधन	10. संख्या	11. क्षेत्र	12. स्पर्शन
13. काल	14. अन्तर	15. भाव	16. अल्पबहुत्व

किण्हा णीला काऊ, तेऊ पम्मा य सुक्कलेस्सा य।
लेस्साणं णिद्देसा, छच्चेव हवंति णियमेण॥493॥

⌘ अर्थ - लेश्याओं के नियम से ये छह ही निर्देश (संज्ञाएँ, नाम) हैं :- कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कपोतलेश्या, तेजोलेश्या (पीतलेश्या), पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या ॥493॥

निर्देश = नाममात्र का कथन करना निर्देश है

नैगम नय

पर्यायार्थिक नय

कृष्ण	नील	कपोत	पीत	पद्म	शुक्ल

असंख्यात लोकमात्र भेद

वण्णोदयेण जणिदो, सरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा।
सा सोढा किण्हादी, अणेयभेया सभेयेण॥494॥

- अर्थ - वर्ण नामकर्म के उदय से जो शरीर का वर्ण होता है उसको द्रव्यलेश्या कहते हैं।
- इसके कृष्ण, नील, कपोत, पीत, पद्म, शुक्ल ये छह भेद हैं तथा प्रत्येक के उत्तर भेद अनेक हैं ॥494॥

द्रव्यलेश्या = शरीर का वर्ण द्रव्यलेश्या है

किस कर्म का उदय कारण है

वर्ण नामकर्म

प्रकार

सामान्य

विशेष

6

प्रत्येक के अनेक

छप्पयणीलकवोदसु-हेमंबुजसंखसण्णिहा वण्णे।
संखेज्जासंखेज्जा-णंतवियप्पा य पत्तेयं॥495॥

- अर्थ - वर्ण की अपेक्षा से कृष्ण आदि लेश्या क्रम से भ्रमर, नीलम (नीलमणि), कबूतर, सुवर्ण, कमल और शंख के समान होती है।
- इनमें से प्रत्येक के इन्द्रियों से प्रकट होने की अपेक्षा संख्यात भेद हैं तथा स्कन्धों के भेदों की अपेक्षा असंख्यात और परमाणुभेद की अपेक्षा अनंत तथा अनंतानंत भेद होते हैं ॥495॥

द्रव्यलेश्या

लेश्या	उदाहरण / समानता
कृष्ण	भ्रमर
नील	नीलमणि
कपोत	कपोत (कबूतर)
पीत	स्वर्ण
पद्म	कमल
शुक्ल	शंख

द्रव्यलेश्या के प्रकार

संख्यात

चक्षु इन्द्रिय द्वारा दिखने की अपेक्षा

असंख्यात

स्कन्ध भेदों की अपेक्षा

अनन्त

परमाणुओं के भेदों की अपेक्षा

णिरया किण्हा कप्पा, भावाणुगया हु तिसुरणरतिरिये।
उत्तरदेहे छक्कं, भोगे रविचंदहरिदंगा॥496॥

- अर्थ - सभी नारकी कृष्णवर्ण ही हैं।
- कल्पवासी देवों की जैसी भावलेश्या है, वैसे ही वर्ण के वे धारक हैं।
- पुनश्च; भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी देव, मनुष्य, तिर्यंच तथा देवों का विक्रिया से बना शरीर, वे छहों वर्ण के धारक हैं।
- पुनश्च; उत्तम, मध्यम, जघन्य भोगभूमि संबंधी मनुष्य और तिर्यंच अनुक्रम से सूर्यसमान, चन्द्रसमान और हरित वर्ण के धारक हैं ॥496॥

द्रव्यलेश्या – स्वामी

नरक गति	• कृष्ण लेश्या
कल्पवासी देव	• जैसी भाव लेश्या, वैसी द्रव्य लेश्या
भवनत्रिक देव	• छहों
कर्मभूमि मनुष्य, तिर्यंच	• छहों
विक्रिया से उत्पन्न देह	• छहों

द्रव्यलेश्या – स्वामी

भोगभूमि मनुष्य, तिर्यंच

उत्तम	मध्यम	जघन्य
सूर्य सदृश	चन्द्र सदृश	हरित वर्ण

बादरआऊतेऊ, सुक्का तेऊ य वाउकायाणं।
गोमुत्तमुग्गवण्णा, कमसो अव्वत्तवण्णो य॥497॥

- अर्थ - बादर अप्कायिक शुक्लवर्ण है।
- बादर अग्निकायिक पीतवर्ण है।
- बादर वायुकायिकों में घनोदधिवात तो गोमूत्र के समान वर्ण का धारक है, घनवात मूंगे के समान वर्ण का धारक है, तनुवात का वर्ण प्रकट नहीं है, अव्यक्त है ॥497॥

द्रव्यलेश्या – स्वामी

बादर जलकायिक

शुक्ल

बादर अग्निकायिक

पीत

बादर वायुकायिक

- घनोदधि वात - गोमूत्र सदृश
- घनवात - मूंग सदृश
- तनुवात - अव्यक्त

सव्वेसिं सुहुमाणं, कावोदा सव्वविग्गहे सुक्का।
सव्वो मिस्सो देहो, कवोदवण्णो हवे णियमा॥498॥

- अर्थ - सर्व ही सूक्ष्म जीवों का शरीर कपोतवर्ण है।
- सभी जीव विग्रहगति में शुक्लवर्ण ही हैं।
- पुनश्च, सभी जीव अपनी पर्याप्ति के प्रारंभ के प्रथम समय से लेकर शरीरपर्याप्ति की पूर्णता तक की जो अपर्याप्त अवस्था (निर्वृत्ति-अपर्याप्त) है वहाँ कपोतवर्ण ही है, ऐसा नियम है ॥498॥

द्रव्यलेश्या – स्वामी

सर्व सूक्ष्म

- कपोत

सर्व विग्रहगति में

- शुक्ल

मिश्र काय में

- कपोत

पृथ्वीकायिक, वनस्पतिकायिक

- छहों

लोगाणमसंखेज्जा, उदयट्ठाणा कसायगा होंति।
तत्थ किलिट्ठा असुहा, सुहा विसुद्धा तदालावा॥499॥

- अर्थ - कषायसंबंधी अनुभागरूप उदयस्थान असंख्यात लोकप्रमाण हैं। उनको यथायोग्य असंख्यात लोक का भाग दीजिये। वहाँ एक भाग बिना अवशेष बहुभागमात्र तो संक्लेशस्थान हैं । वे भी असंख्यात लोकप्रमाण हैं।
- पुनश्च एक भागमात्र विशुद्धिस्थान हैं। वे भी असंख्यात लोकप्रमाण हैं क्योंकि असंख्यात के भेद बहुत हैं। वहाँ संक्लेशस्थान तो अशुभ लेश्या संबंधी जानने और विशुद्धिस्थान शुभलेश्या संबंधी जानने ॥499॥

कषायों के उदय स्थान

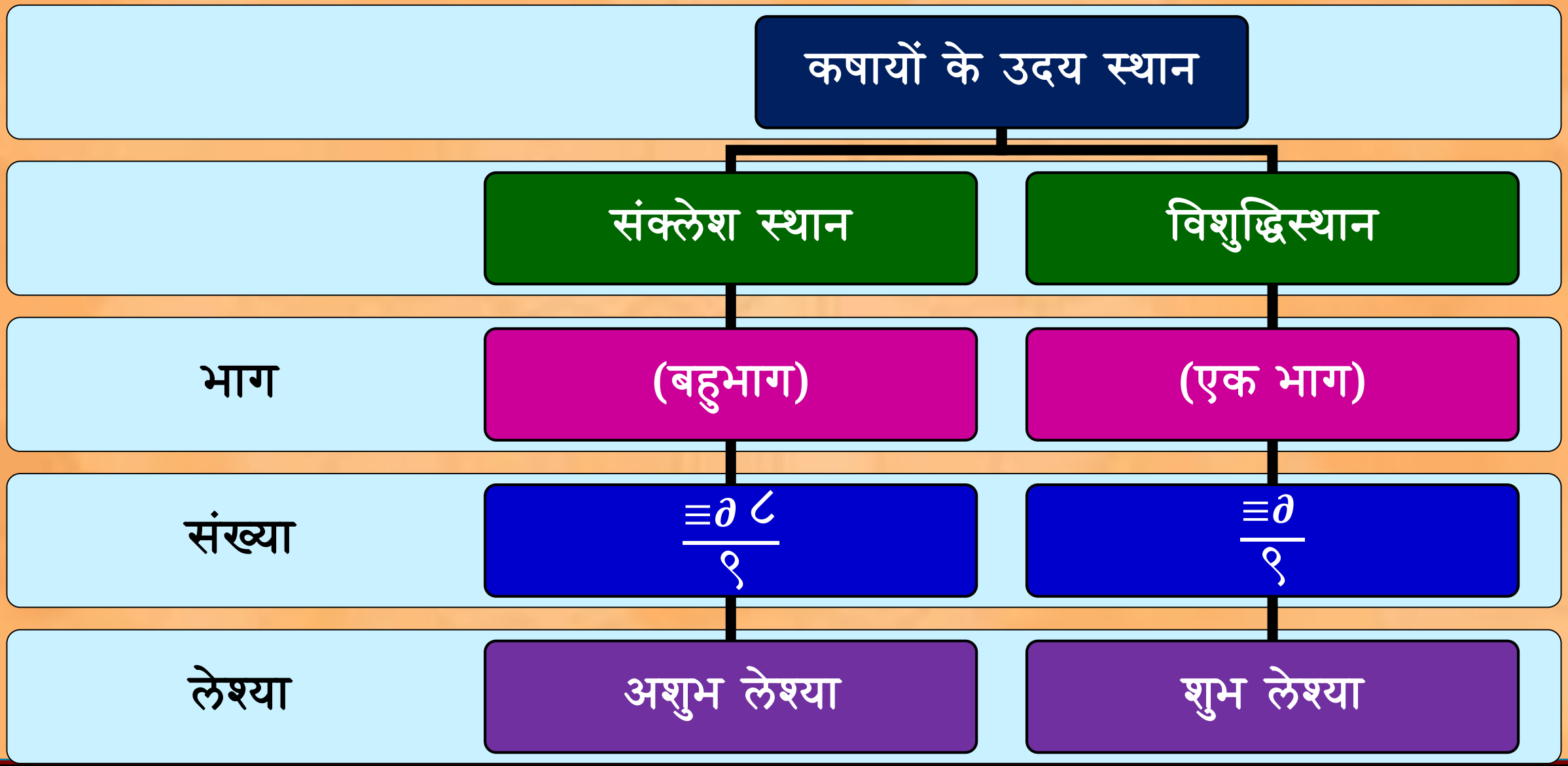
कषायों के उदय स्थान
संक्लेश स्थान
विशुद्धिस्थान
भाग
(बहुभाग)
(एक भाग)
संख्या
≡∂ ८
१
≡∂
१
लेश्या
अशुभ लेश्या
शुभ लेश्या

तिव्वतमा तिव्वतरा, तिव्वा असुहा सुहा तहा मंदा। मंदतरा मंदतमा, छट्ठाणगया हु पत्तेयं॥500॥

- अर्थ - अशुभ लेश्यासंबंधी तीव्रतम, तीव्रतर, तीव्र ये तीन स्थान, और शुभलेश्यासंबंधी मंद, मंदतर, मंदतम ये तीन स्थान होते हैं।
- इन कृष्ण लेश्यादिक छहों लेश्याओं में से जो अशुभ स्थान हैं उनमें उत्कृष्ट से जघन्य पर्यन्त और जो शुभ स्थान हैं उनमें तो जघन्य से उत्कृष्ट पर्यन्त प्रत्येक भेद में असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानपतित हानि-वृद्धि होती है ॥500॥

अशुभ लेश्या (≡∂८ / ९)

कृष्ण	नील	कपोत
≡∂८८ / ९९	≡∂८८ / ९९९	≡∂८ / ९९९
तीव्रतम संक्लेश	तीव्रतर संक्लेश	तीव्र संक्लेश

शुभ लेश्या ($\frac{\equiv\partial}{\text{९}}$)

पीत

$\frac{\equiv\partial \; \text{८}}{\text{९ ९}}$

मंद कषायरूप
विशुद्धि

पद्म

$\frac{\equiv\partial \; \text{८}}{\text{९ ९ ९}}$

मंदतर कषायरूप
विशुद्धि

शुक्ल

$\frac{\equiv\partial}{\text{९ ९ ९}}$

मंदतम कषायरूप
विशुद्धि

अशुभ लेश्या

प्रत्येक अशुभ लेश्या के परिणामों में षट्स्थान पतित हानि-वृद्धि स्थान होते हैं ।

अशुभ लेश्या के उत्कृष्ट से जघन्य परिणाम तक संक्लेश की अनंत भाग हानि आदि 6 हानिया होती हैं ।

ऐसी हानिया असंख्यात लोक प्रमाण होती हैं ।

शुभ लेश्या

प्रत्येक शुभ लेश्या के परिणामों में षट्स्थान पतित हानि-वृद्धि स्थान होते हैं ।

शुभ लेश्या के जघन्य से उत्कृष्ट परिणाम तक विशुद्धि की अनंत भाग वृद्धि आदि 6 वृद्धिया होती हैं ।

ऐसी वृद्धिया भी असंख्यात लोक प्रमाण होती हैं ।

असुहाणं वरमज्झिम-अवरंसे किण्हणीलकाउतिए।
परिणमदि कमेणप्पा, परिहाणीदो किलेसस्स॥501॥

⌘ अर्थ - कृष्ण, नील, कपोत इन तीन अशुभ लेश्याओं के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अंशरूप में यह आत्मा क्रम से संक्लेश की हानिरूप से परिणमन करता है ॥501॥

संक्लेश परिणामों की हानि होने पर

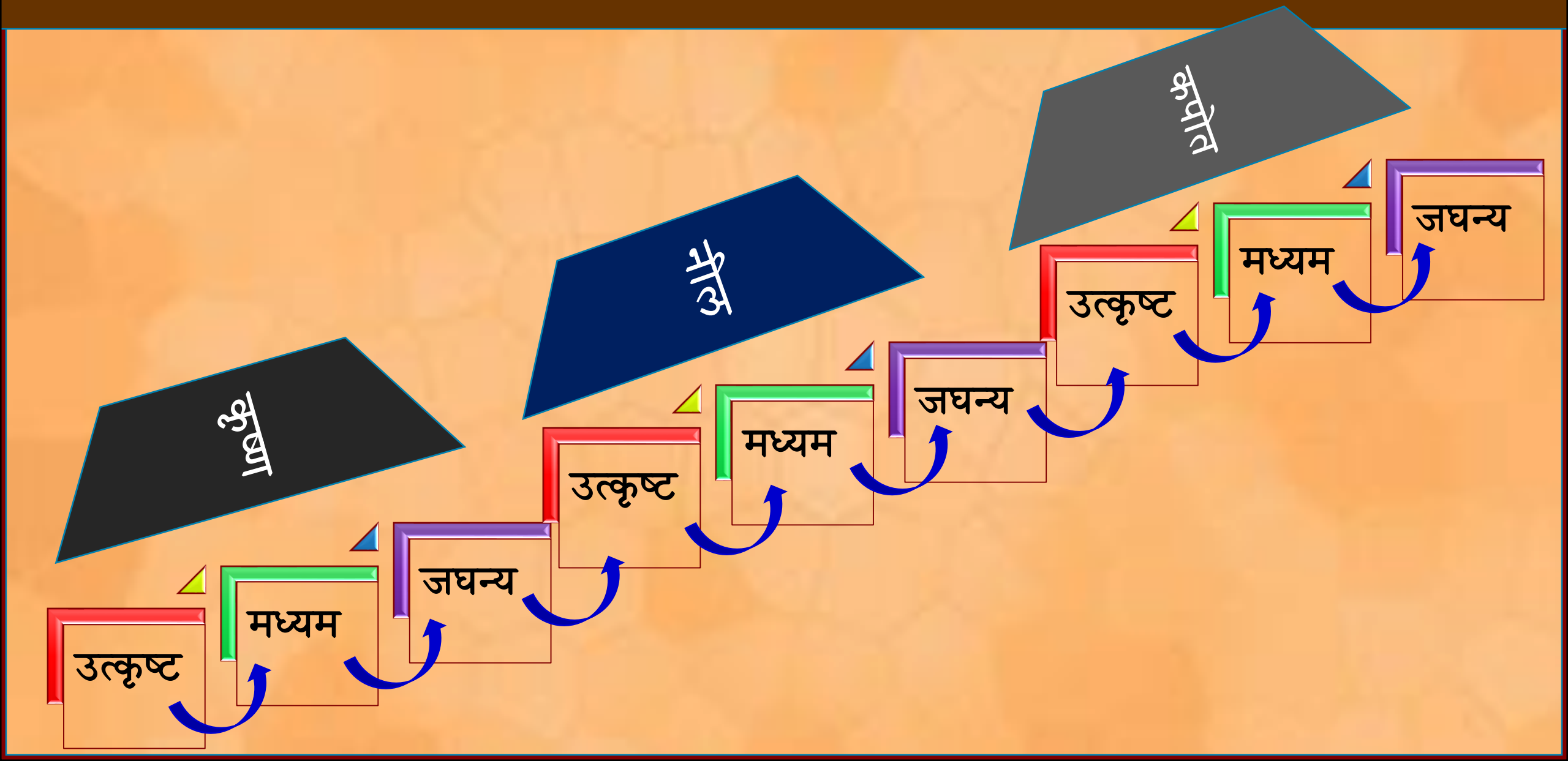

काऊ णीलं किण्हं, परिणमदि किलेसवड्ढिदो अप्पा।
एवं किलेसहाणी-वड्ढीदो होदि असुहतियं॥502॥

- अर्थ - उत्तरोत्तर संक्लेश परिणामों की वृद्धि होने से यह आत्मा कपोत से नील और नील से कृष्ण लेश्यारूप परिणमन करता है।
- इस तरह यह जीव संक्लेश की हानि और वृद्धि की अपेक्षा से तीन अशुभ लेश्यारूप परिणमन करता है ॥502॥

संक्लेश परिणामों की वृद्धि होने पर

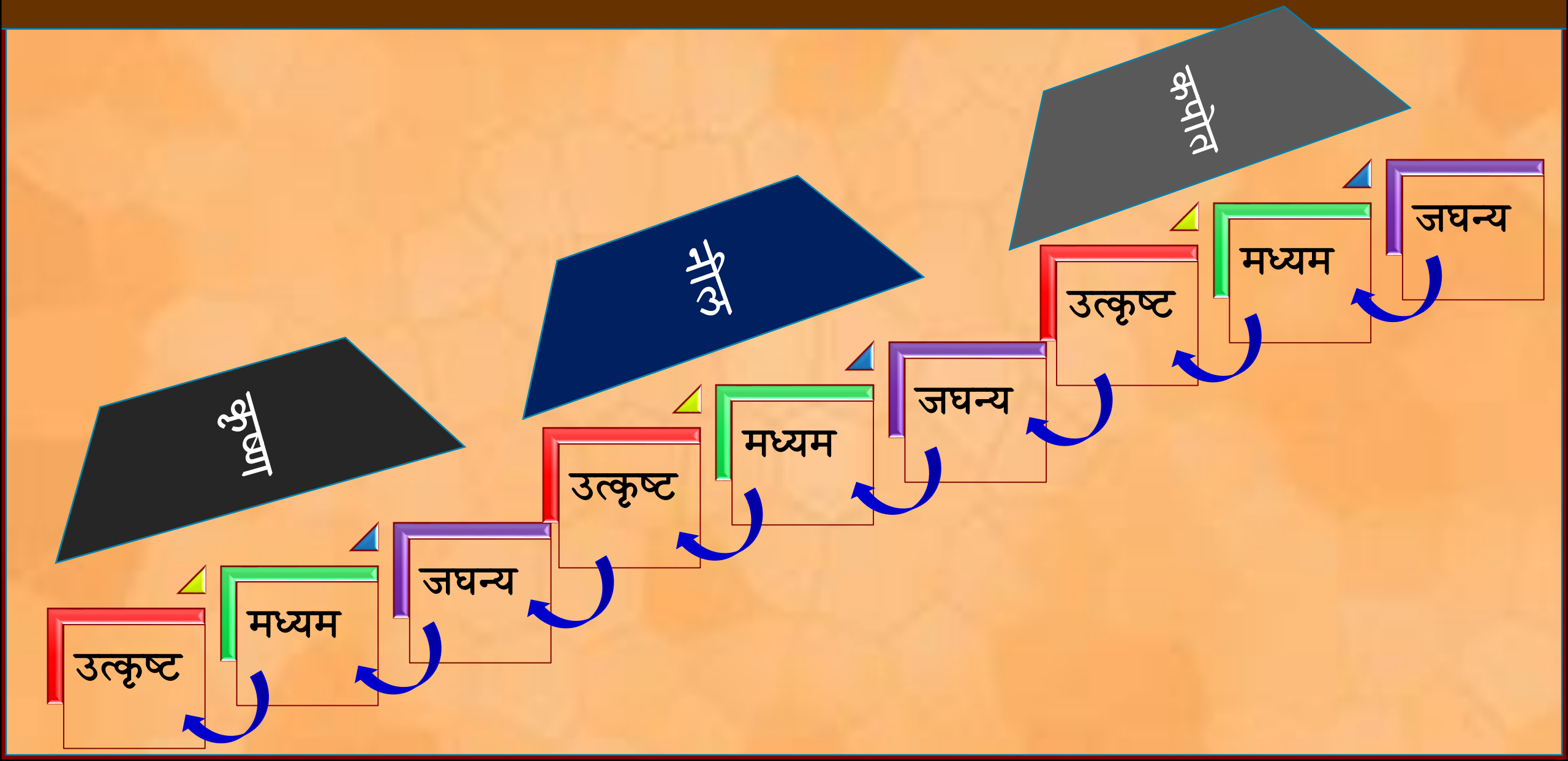

तेऊ पउमे सुक्के, सुहाणमवरादिअंसगे अप्पा।
सुद्धिस्स य वड्ढीदो, हाणीदो अण्णहा होदि॥503॥

- अर्थ - उत्तरोत्तर विशुद्धि की वृद्धि होने से यह आत्मा पीत, पद्म, शुक्ल इन तीन शुभ लेश्याओं के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अंशरूप में परिणमन करता है तथा
- विशुद्धि की हानि होने से उत्कृष्ट से जघन्य पर्यन्त शुक्ल, पद्म, पीत लेश्यारूप परिणमन करता है।
- इस तरह विशुद्धि की हानि-वृद्धि होने से शुभ लेश्याओं का परिणमन होता है ॥503॥

विशुद्धि की वृद्धि होने पर

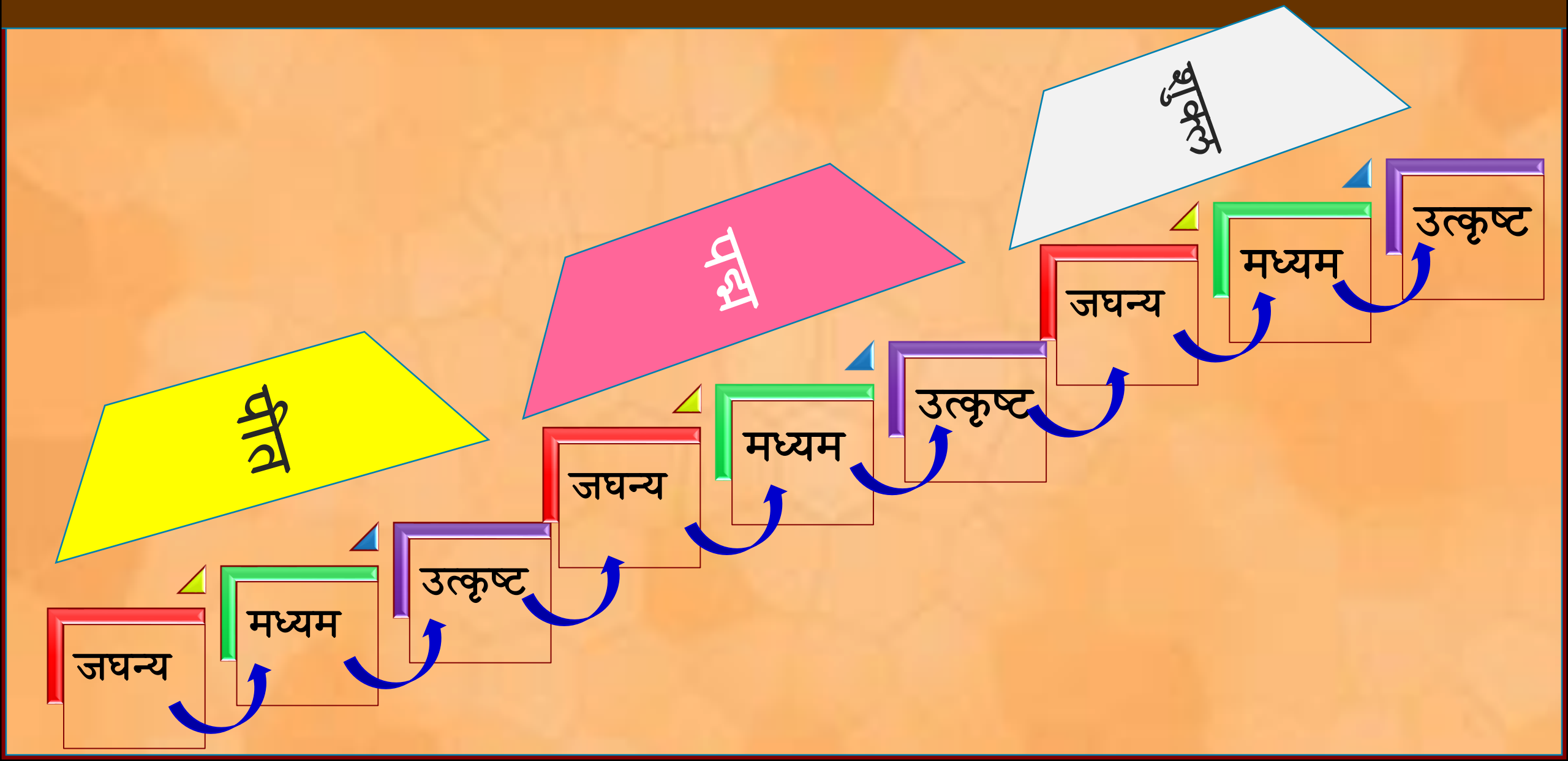

विशुद्धि की हानि होने पर

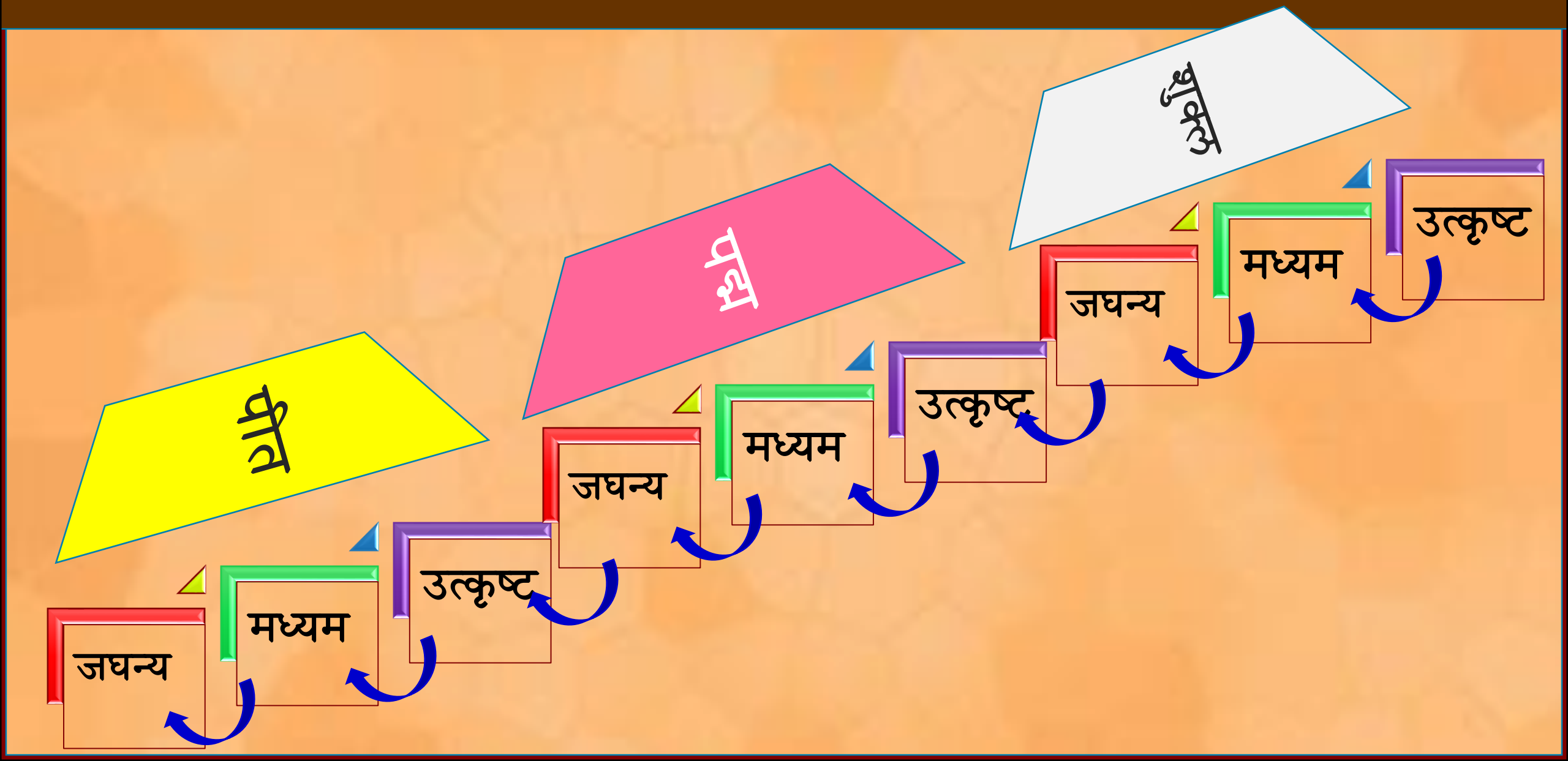

संकमणं सट्ठाण-परट्ठाणं होदि किण्ह-सुक्काणं।
वड्ढीसु हि सट्ठाणं, उभयं हाणिम्मि सेस उभये वि॥504॥

- अर्थ - कृष्ण और शुक्ल लेश्या में वृद्धि की अपेक्षा स्वस्थान-संक्रमण ही होता है और हानि की अपेक्षा स्वस्थान, परस्थान दोनों ही संक्रमण होते हैं तथा
- शेष चार लेश्याओं में हानि तथा वृद्धि दोनों अपेक्षाओं में स्वस्थान, परस्थान दोनों ही संक्रमणों के होने की संभावना है ॥504॥

संक्रमण
(परिणामों का पलटना)

- **स्वस्थान**
  - परिणाम बदलकर उसी लेश्यारूप रहना
- **परस्थान**
  - परिणाम बदलकर अन्य लेश्यारूप होना

संक्रमण

कृष्ण और शुक्ल लेश्या में

वृद्धि होने पर

- स्वस्थान संक्रमण

हानि होने पर

- स्वस्थान, परस्थान संक्रमण

नील, कपोत, पीत, पद्म लेश्या में

वृद्धि होने पर

- स्वस्थान, परस्थान संक्रमण

हानि होने पर

- स्वस्थान, परस्थान संक्रमण

लेस्साणुक्कस्सादो-वरहाणी अवरगादवरवड्ढी।
सट्ठाणे अवरादो, हाणी णियमा परट्ठाणे॥505॥

⌘ अर्थ - स्वस्थान की अपेक्षा लेश्याओं के उत्कृष्ट स्थान के समीपवर्ती स्थान का परिणाम उत्कृष्ट स्थान के परिणाम से अनंत भागहानिरूप है तथा स्वस्थान की अपेक्षा से ही जघन्य स्थान के समीपवर्ती स्थान का परिणाम जघन्य स्थान से अनंत भागवृद्धिरूप है।

⌘ संपूर्ण लेश्याओं के जघन्य स्थान से यदि हानि हो तो नियम से अनंत गुणहानिरूप परस्थान संक्रमण ही होता है ॥505॥

संकमणे छट्ठाणा, हाणिसु वड्ढीसु होंति तण्णामा।
परिमाणं च य पुव्वं, उत्तकमं होदि सुदणाणे॥506॥

⌘ अर्थ - संक्रमणाधिकार में हानि और वृद्धि दोनों अवस्थाओं में षट्स्थान होते हैं। इन षट्स्थानों के नाम तथा परिमाण पहले श्रुतज्ञान (ज्ञान मार्गणा) में जो कहे हैं वे ही यहाँ पर भी समझना ॥506॥

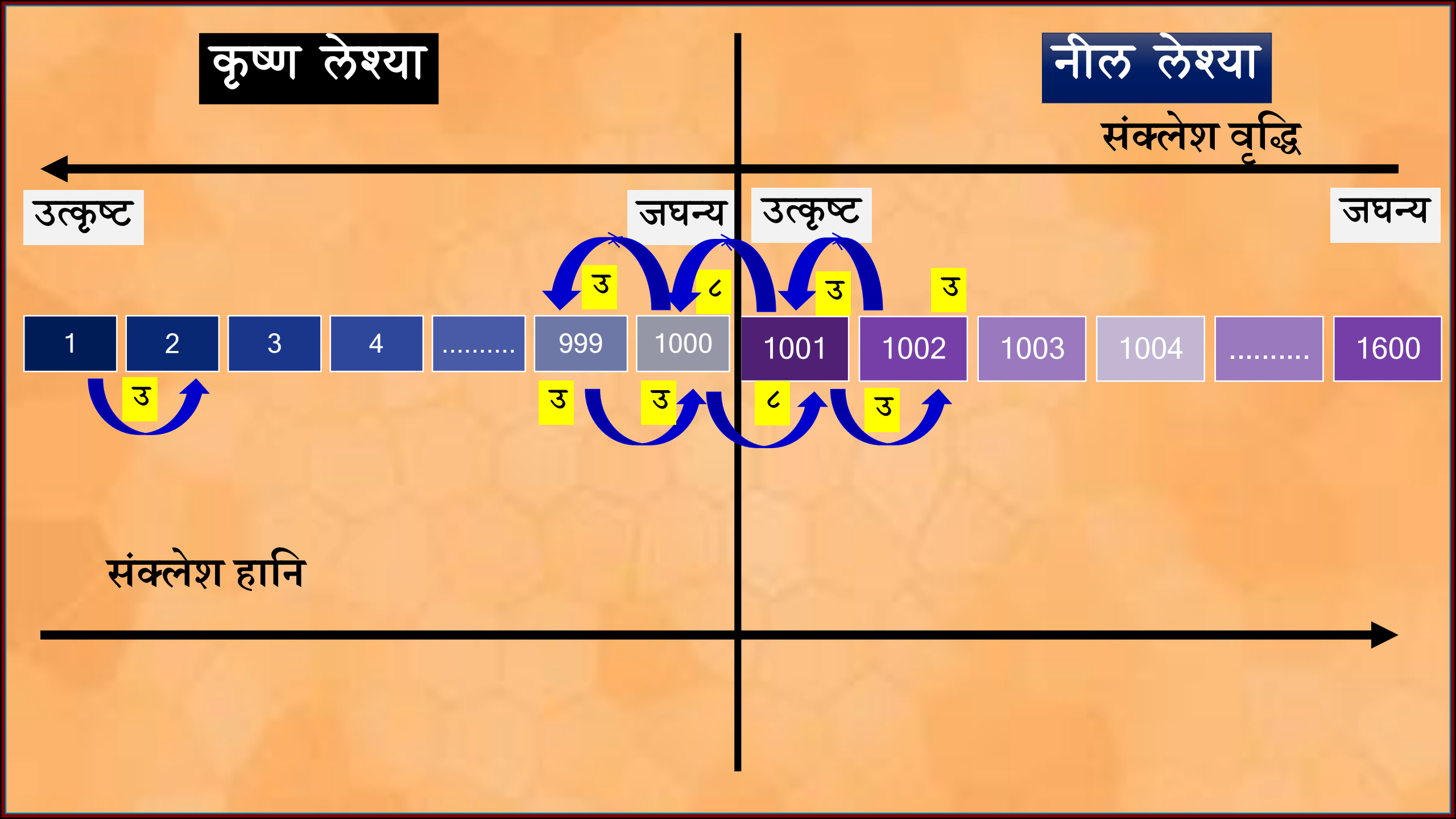
कृष्ण लेश्या
नील लेश्या
संक्लेश वृद्धि
उत्कृष्ट
जघन्य
उत्कृष्ट
जघन्य
1
2
3
4
.....
999
1000
1001
1002
1003
1004
.....
1600
संक्लेश हानि

संक्लेश परिणामों की शक्तियाँ

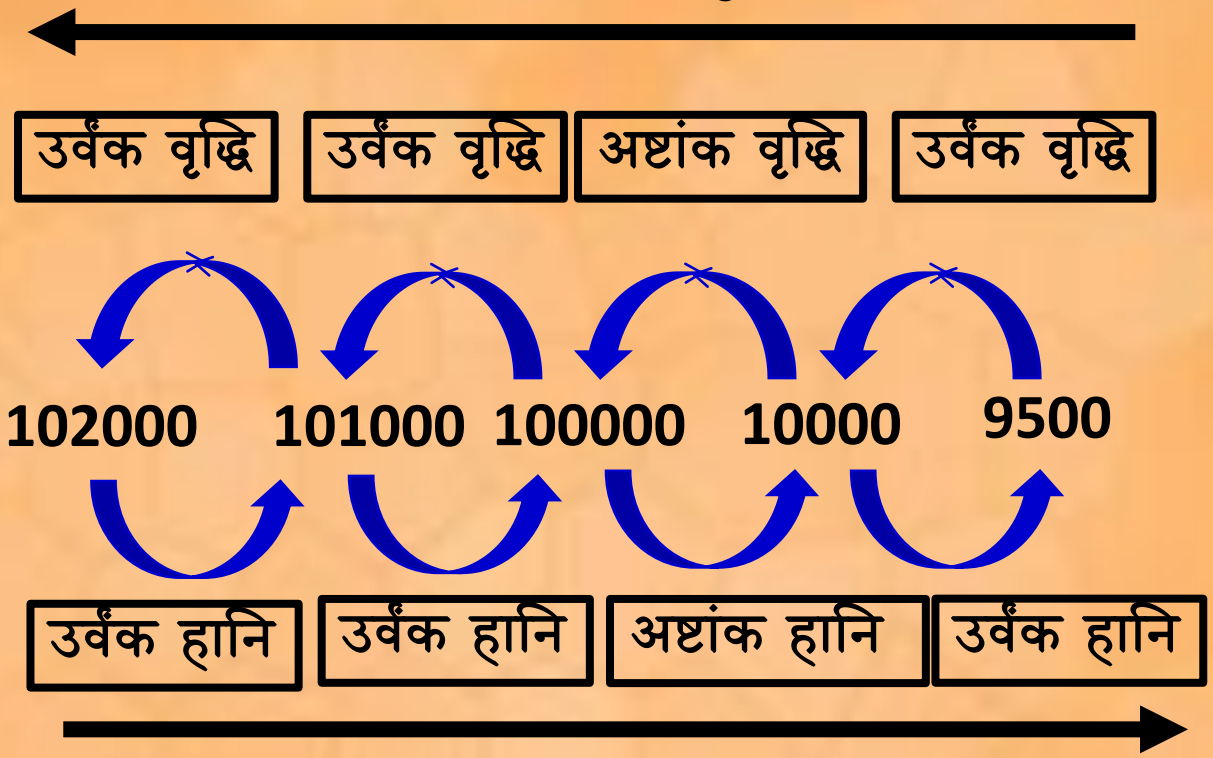

संक्रमण - नियम

स्वस्थान में उत्कृष्ट से अगला परिणाम उर्वंकहानिरूप है ।

जैसे उत्कृष्ट कृष्ण से अगला कृष्ण का परिणाम अनंत भागहानिरूप ही है ।

उत्कृष्ट पीत के परिणाम से उसी का अगला परिणाम उर्वंक हानिरूप है ।

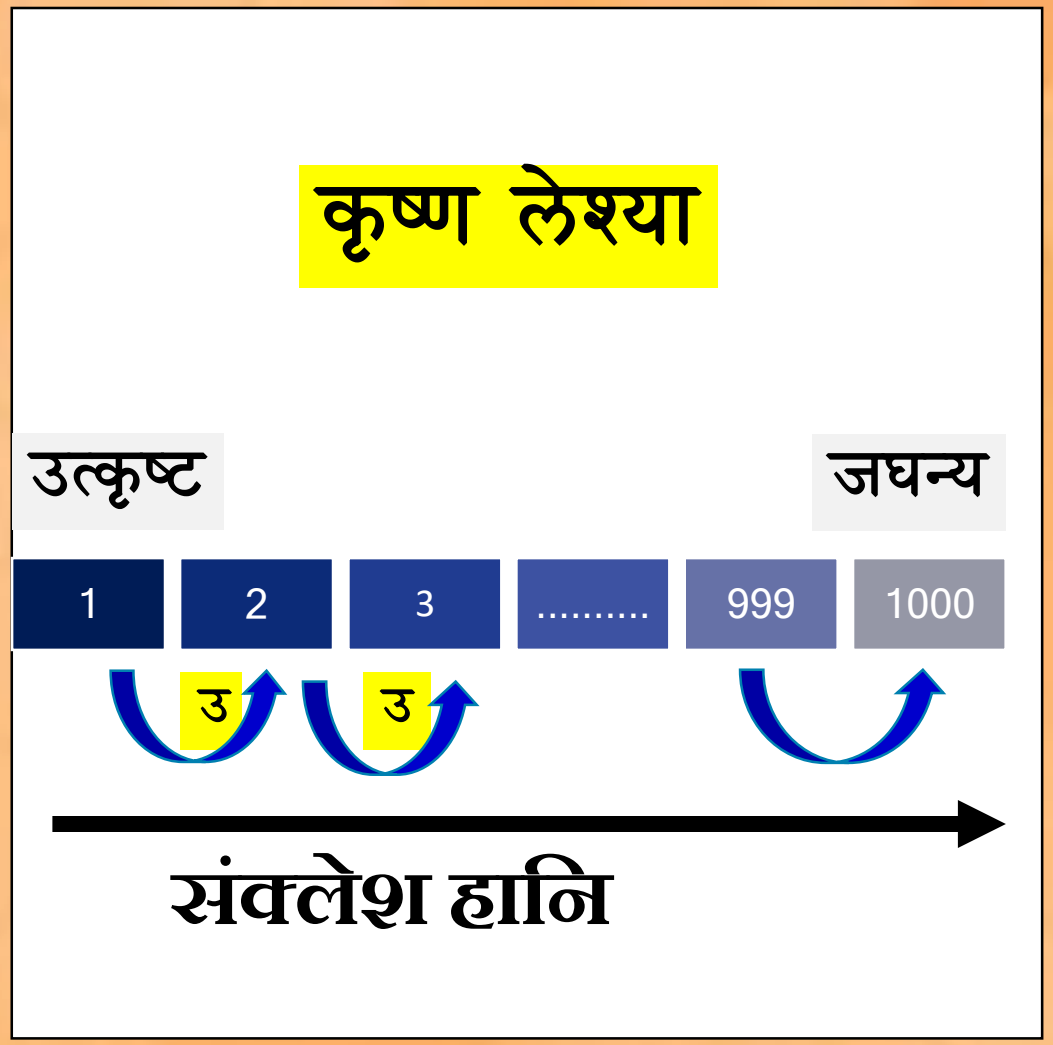

संक्रमण - नियम

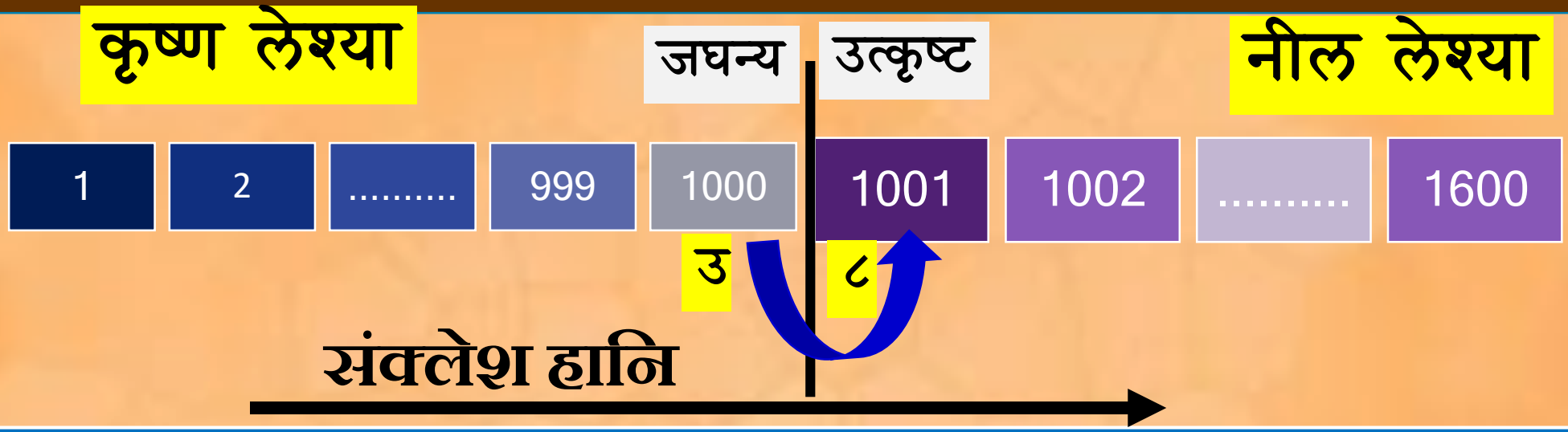

परस्थान में जघन्य से अगला परिणाम अनंत गुणा हानिरूप है ।

जैसे जघन्य कृष्ण से उत्कृष्ट नील का परिणाम अनंत गुणा हानिरूप है ।

जघन्य पद्म से उत्कृष्ट पीत का परिणाम अनंत गुणा हानिरूप है ।

संक्रमण - नियम

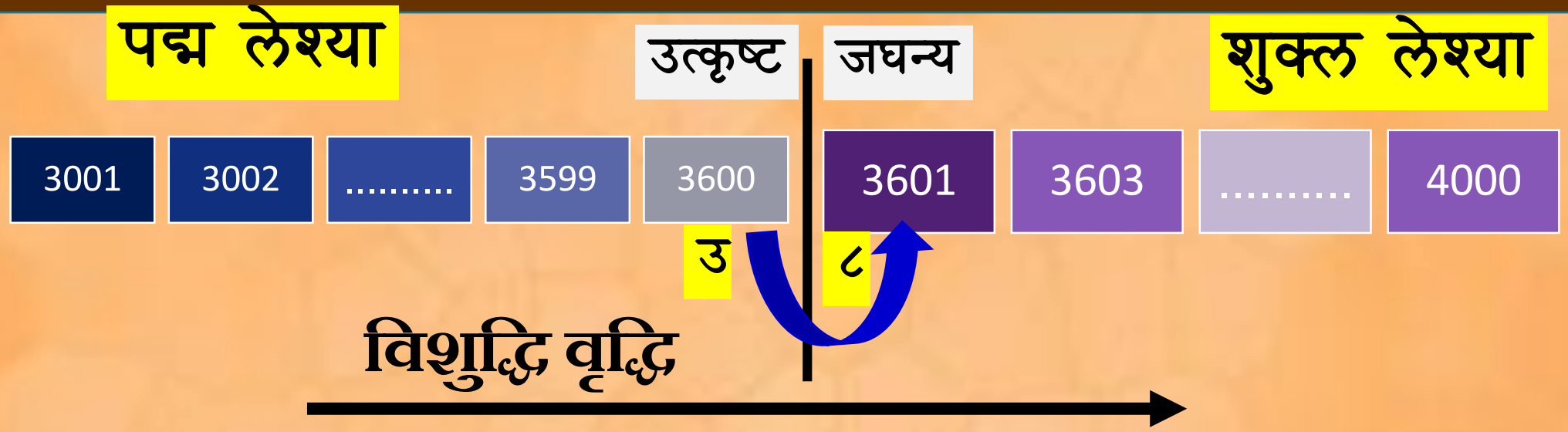

परस्थान में उत्कृष्ट से अगला परिणाम अष्टांक वृद्धिरूप है ।

जैसे उत्कृष्ट पद्म से जघन्य शुक्ल का परिणाम अष्टांक वृद्धिरूप है ।

उत्कृष्ट नील से जघन्य कृष्ण का परिणाम अष्टांक वृद्धिरूप है ।

कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट स्थान संक्लेश षट्स्थान का अंतिम स्थान है । इसलिये उर्वंक वृद्धिरूप है ।

शुक्ल लेश्या का उत्कृष्ट स्थान विशुद्धि षट्स्थान का अंतिम स्थान है । इसलिये उर्वंक वृद्धिरूप है ।

कृष्ण लेश्या का जघन्य स्थान वृद्धिरूप षट्स्थान का आदि स्थान है । इसलिये अष्टांक वृद्धिरूप है ।

शुक्ल लेश्या का जघन्य स्थान षट्स्थान का आदि स्थान है । इसलिये अष्टांक वृद्धिरूप है ।

संक्लेश

कृष्ण के उत्कृष्ट से कपोत के जघन्य तक संक्लेश हानि जानना ।

कपोत के जघन्य से कृष्ण के उत्कृष्ट तक संक्लेश की वृद्धि जानना ।

विशुद्धि

पीत के जघन्य से शुक्ल के उत्कृष्ट तक विशुद्धि की वृद्धि जानना ।

शुक्ल के उत्कृष्ट से पीत के जघन्य तक विशुद्धि की हानि जानना ।

पहिया जे छप्पुरिसा, परिभट्टारण्णमज्झदेसम्हि।
फलभरियरुक्खमेगं, पेक्खित्ता ते विचितंति॥507॥

⌘ अर्थ - कृष्ण आदि छह लेश्या वाले कोई छह पथिक वन के मध्य में मार्ग से भ्रष्ट होकर फलों से पूर्ण किसी वृक्ष को देखकर अपने-अपने मन में इस प्रकार विचार करते हैं और उसके अनुसार वचन कहते हैं–

णिम्मूलखंधसाहुव-साहं छित्तु चिणित्तु पडिदाइं।
खाउं फलाई इदि जं, मणेण वयणं हवे कम्मं॥508॥

- वृक्ष को मूल से उखाड़कर फल खाऊगा,
- वृक्ष को स्कंध से काटकर फल खाऊगा,
- वृक्ष की बड़ी-बड़ी शाखाओं को काटकर फल खाऊगा,
- वृक्ष की छोटी-छोटी शाखाओं को काटकर फल खाऊगा,
- वृक्ष के फलों को तोड़कर खाऊगा,
- वृक्ष से स्वयं टूटे फलों को खाऊगा
- – इस प्रकार मनपूर्वक जो वचन होता है, वह क्रम से उन लेश्याओं का कार्य होता है ॥508॥

लेश्या – विचार एवं वचन

कृष्ण	वृक्ष को मूल से उखाड़कर फल खाऊगा
नील	वृक्ष को स्कंध से काटकर फल खाऊगा
कपोत	वृक्ष की बड़ी-बड़ी शाखाओं को काटकर फल खाऊगा
पीत	वृक्ष की छोटी-छोटी शाखाओं को काटकर फल खाऊगा
पद्म	वृक्ष के फलों को तोड़कर खाऊगा
शुक्ल	वृक्ष से स्वयं टूटे फलों को खाऊगा

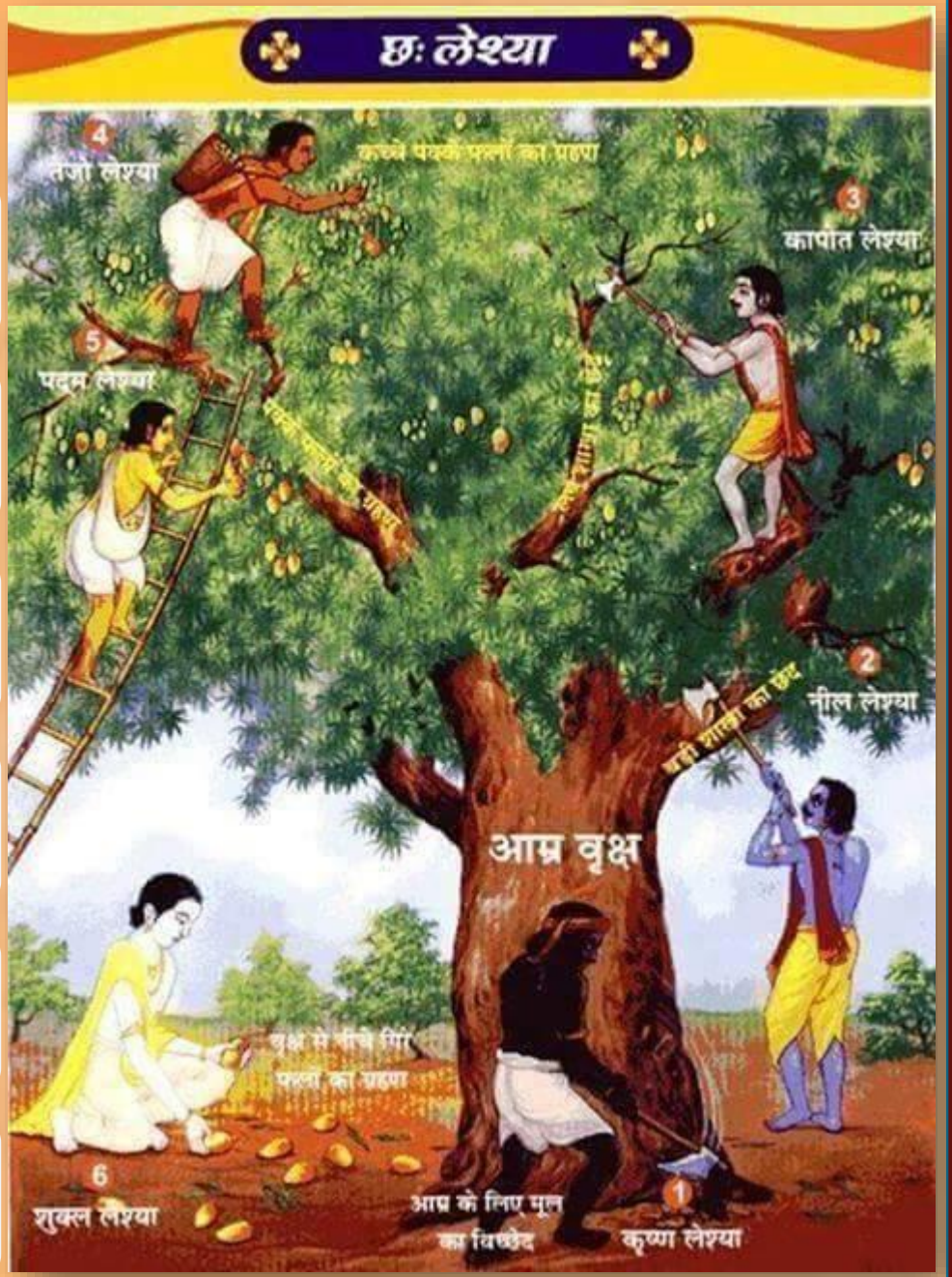

नोट — वृक्ष का दृष्टांत मात्र दिया गया है, इसलिये इस ही तरह अन्यत्र भी समझना चाहिए ।

वृद्धि के क्रम को समझने के लिये संकेतों का षट्स्थान यंत्र

उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ८

चंडो ण मुंचइ वेरं, भंडणसीलो य धम्मदयरहिओ।
दुट्ठो ण य एदि वसं, लक्खणमेयं तु किण्हस्स॥509॥

⌘ अर्थः प्रचंड तीव्र क्रोधी, बैर न छोड़े, युद्ध करने का स्वभाव हो, धर्म और दया से रहित, दुष्ट, गुरुजनादिक किसी के वश न हो – ये सभी कृष्ण लेश्या के लक्षण हैं ॥509॥

कृष्ण लेश्या का लक्षण

प्रचंड हो

बैर ना छोड़े

युद्ध करने का स्वभाव हो

धर्म व दया रहित हो

दुष्ट हो

गुरुजनादि के वश में ना आवे ।

मंदो बुद्धिविहीणो, णिव्विण्णाणी य विसयलोलो य।
माणी मायी य तहा, आलस्सो चेव भेज्जो य॥510॥
णिद्दावंचणबहुलो, धणधण्णे होदि तिव्वसण्णा य।
लक्खणमेयं भणियं, समासदो णीललेस्सस्स॥511॥

⌘ अर्थः काम करने में मंद, बुद्धिविहीन, कला-चातुर्य से रहित, विषयलोलुपी, मानी, मायावी, आलसी, जिसके अभिप्राय को अन्य कोई न जाने, अति निद्रालु, जो दूसरों को बहुत ठगे, धन-धान्य आदिक में अतितीव्र लालसा हो — ये संक्षेप से नील लेश्या के लक्षण हैं ॥510-511 ॥

नील लेश्या का लक्षण

1. काम करने में मंद हो
2. बुद्धिविहीन हो
3. कला (विशेषज्ञान, चतुरता) से रहित हो
4. 5 इन्द्रियों के विषयों में अतिलंपटी हो
5. मानी

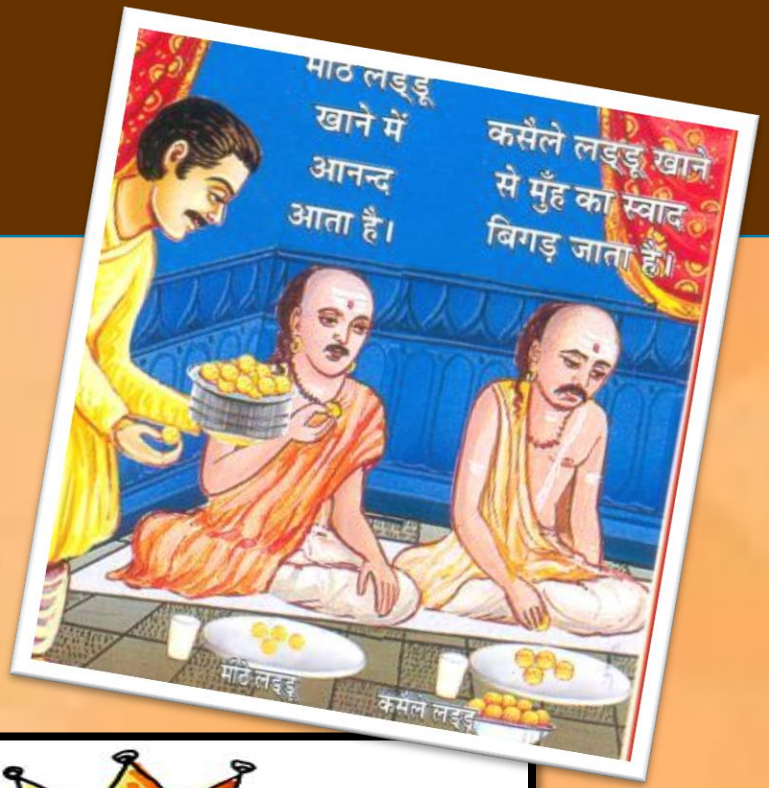

नील लेश्या का लक्षण

6. मायावी

7. आलसी

8. जिसके अभिप्राय को कोई और न जान सके

9.निद्रा बहुल

10. अन्य को ठगने की बहुलता

11. धन-धान्य आदि में तीव्र वांछा करने वाला

रूसइ णिंदइ अण्णे, दूसइ बहुसो य सोयभयबहुलो।
असुयइ परिभवइ परं, पसंसये अप्पयं बहुसो॥512॥

⌘ दूसरों पर क्रोध करे, परनिंदक, अनेक प्रकार से दूसरों को दुःख दे, शोकाकुलित, भयग्रस्त, दूसरों के ऐश्वर्यादिक को सहन नहीं कर सके, दूसरों का अपमान करे, अपनी बहुत प्रकार से प्रशंसा करे, और ॥512॥

कपोत लेश्या का लक्षण

1. दूसरों पर क्रोध करे
2. अन्य की निंदा करे
3. अनेक प्रकार से दूसरों को दुःख दे
4. शोक-बहुल हो
5. भय-बहुल हो
6. ईर्ष्यालु
7. अन्य का अपमान करे
8. अपनी प्रशंसा करे

ण य पत्तियइ परं सो, अप्पाणं यिव परं पि मण्णंतो।
थूसइ अभित्थुवंतो, ण य जाणइ हाणि-वड्ढिं वा॥513॥

⌘ औरों को भी अपने समान पापी कपटी मानकर उनका विश्वास नहीं करे, स्तुति करने वालों पर बहुत प्रसन्न हो, अपनी और दूसरे की हानि-वृद्धि न जाने और ॥513॥

कपोत लेश्या का लक्षण

9. अपने जैसा पापी-कपटी अन्य को मानता हुआ किसी का विश्वास न करे

10. अपनी स्तुति करने वाले पर बहुत संतुष्ट हो

11. स्व-पर की हानि-वृद्धि न जाने

मरणं पत्थेइ रणे, देइ सुबहुगं वि थुव्वमाणो दु।
ण गणइ कज्जाकज्जं, लक्खणमेयं तु काउस्स ॥514॥

⌘ युद्ध में मरना चाहे, अपनी स्तुति करने वालों को खूब दान दे, कार्य-अकार्य को नहीं गिने — ये सब कपोत लेश्या के लक्षण हैं ॥514॥

कपोत लेश्या का लक्षण

12. युद्ध में मरना चाहे

13. प्रशंसा करने वाले को बहुत धन दे

14. कार्य-अकार्य को नहीं गिने

जाणइ कज्जाकज्जं, सेयमसेयं च सव्वसमपासी।
दयदाणरदो य मिदू, लक्खणमेयं तु तेउस्स॥515॥

⌘ कार्य-अकार्य, सेव्य-असेव्य को जाने, सबमें समदर्शी हो, दान देने में प्रीतिवंत, मन वचन काय से कोमल हो — ये सब पीत (तेजो) लेश्या के लक्षण हैं ॥515॥

पीत लेश्या का लक्षण

1. कार्य-अकार्य, सेव्य-असेव्य आदि को जानता हो
2. सबमें समदर्शी हो
3. दया-दानादि में प्रीतिवंत हो
4. मन-वचन-काय में कोमल हो

चागी भद्दो चोक्खो, उज्जवकम्मो य खमदि बहुगं पि।
साहुगुरुपूजणरदो, लक्खणमेयं तु पम्मस्स॥516॥

⌘ त्यागी, भद्रपरिणामी, सुकार्यरूप स्वभावी, शुभभाव में उद्यमरूप कर्म करे, कष्ट एवं अनिष्ट उपद्रव को सहने वाला, मुनिजन एवं गुरुजन की पूजा में प्रीतिवंत — ये सब पद्म लेश्या के लक्षण हैं ॥516॥

पद्म लेश्या का लक्षण

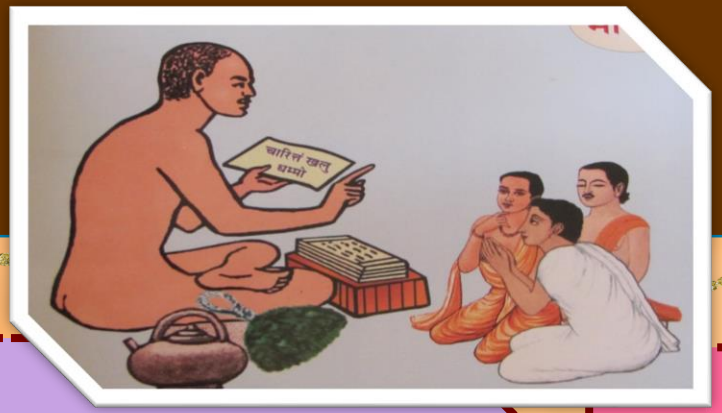

1. त्यागी

2. भद्र-परिणामी

3. सुकार्य करने का स्वभाव

4. शुभभाव में उद्यमी

5. कष्ट-उपद्रवों को सहन करे

6. मुनि-गुरु आदि की पूजा में प्रीतिवंत

ण य कुणइ पक्खवायं, ण वि य णिदाणं समो य सव्वेसिं।
णत्थि य रायद्दोसा, णेहो वि य सुक्कलेस्सस्स॥517॥

⌘ पक्षपात न करे, निदान न करे, सर्वजीवों में समताभाव हो, इष्टानिष्ट में राग-द्वेष रहित हो, पुत्र, स्त्री आदिक में स्नेहरहित हो — ये सब शुक्ल लेश्या के लक्षण हैं ॥517॥

शुक्ल लेश्या का लक्षण

1. पक्षपात न करे

2. निदान न करे

3. सब जीवों में समान भाव हो

4. इष्ट-अनिष्ट में राग-द्वेष न करे

5. स्त्री-पुत्र आदि में स्नेहरहित हो

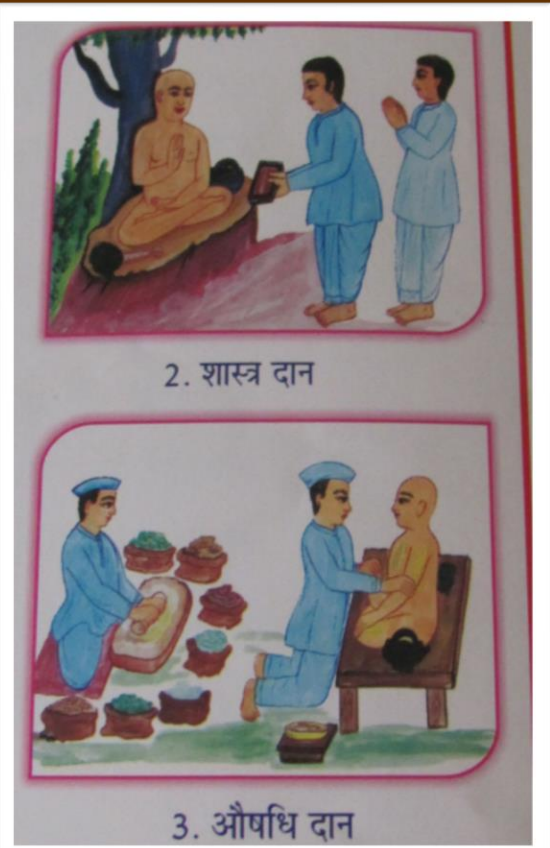

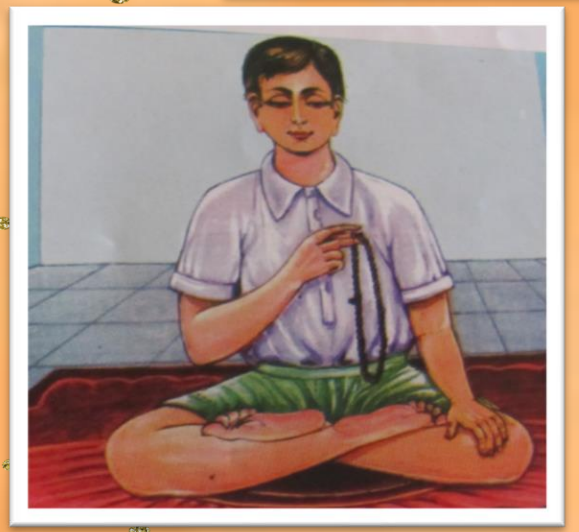

लेस्साणं खलु अंसा, छब्बीसा होंति तत्थ मज्झिमया।
आउगबंधणजोगा, अट्ठट्ठवगरिसकालभवा॥518॥

⌘ अर्थ - लेश्याओं के कुल छब्बीस अंश हैं, इनमें से मध्यम के आठ अंश जो कि आठ अपकर्ष काल में होते हैं वे ही आयुकर्म के बंध के योग्य होते हैं ॥518॥

लेश्या के 26 अंश

- 18 अंश
  - कृष्ण — प्रत्येक के ज, म, उ
  - नील — प्रत्येक के ज, म, उ
  - कपोत — प्रत्येक के ज, म, उ
  - पीत — प्रत्येक के ज, म, उ
  - पद्म — प्रत्येक के ज, म, उ
  - शुक्ल — प्रत्येक के ज, म, उ
- 8 मध्यम अंश (आयु बंध के योग्य) — कपोत लेश्या के उत्कृष्ट से पीत लेश्या के उत्कृष्ट तक

आयु के बंध-अबंध स्थान

शक्ति स्थान	शिला भेद		भूमिभेद							
लेश्या स्थान	कृष्ण		कृ	कृ नी	कृ नी का			कृ नी का पी	कृ नी का पी प	कृ नी का पी प शु
आयु बंध-अबंध स्थान	0	1	1	1	1	2	3	4	4	4
		न	न	न	न	न ति	न ति म	चारों आयु	चारों आयु	चारों आयु

शक्ति स्थान	धूलिरेखा									जल रेखा
लेश्या स्थान	कृ नी का पी प शु			नी का पी प शु	का पी प शु	पी प शु		प शु	शु	शुक्ल
आयु बंध-अबंध स्थान	4	3	2	1	1	1	0	0	0	0
	चारों आयु	ति म दे	म, दे	दे	दे	दे				

अपकर्ष (निरुक्ति से)

भुज्यमान (वर्तमान) आयु का

अपकर्षण कर-करके (अर्थात् भोगते हुए)

पर-भव की आयु को बांधना

अपकर्ष कहलाता है ।

आयु बंध का काल

अपकर्ष काल

अपकर्ष = भुज्यमान आयु के तीन भागों में से दो भाग बीतने पर अवशिष्ट एक भाग के प्रथम अंतर्मुहूर्त प्रमाण काल को अपकर्ष कहते हैं ।

ऐसे अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त प्रमाण आठ अपकर्ष काल होते हैं ।

असंक्षेपाद्धा से अन्तर्मुहूर्त पूर्व का काल

भुज्यमान आयु में आवली के असंख्यात भाग प्रमाण काल अवशेष रहने के पूर्व का अंतर्मुहूर्त मात्र काल

(अगर आठों अपकर्ष काल में आयु न बधे तो यहा बधती है।)

उदाहरण
(माना—किसी कर्मभूमिया मनुष्य या तिर्यंच की आयु 6561 वर्ष है)

	बीती आयु	अवशेष आयु
प्रथम अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $6561\times\frac{2}{3}=4374$	$6561\times\frac{1}{3}=2187$
द्वितीय अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $2187\times\frac{2}{3}=1458$ • $4374+1458=5832$	$2187\times\frac{1}{3}=729$
तृतीय अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $729\times\frac{2}{3}=486$ • $5832+486=6318$	$729\times\frac{1}{3}=243$
चतुर्थ अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $243\times\frac{2}{3}=162$ • $6318+162=6480$	$243\times\frac{1}{3}=81$

उदाहरण
(माना—किसी कर्मभूमिया मनुष्य या तिर्यंच की आयु 6561 वर्ष है)

	बीती आयु	अवशेष आयु
पंचम अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $81\times\frac{2}{3}=54$ • 6480 + 54 = 6534	$81\times\frac{1}{3}=27$
षष्ठम अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $27\times\frac{2}{3}=18$ • 6534 + 18 = 6552	$27\times\frac{1}{3}=9$
सप्तम अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $9\times\frac{2}{3}=6$ • 6552 + 6 = 6558	$9\times\frac{1}{3}=3$
अष्टम अपकर्ष काल कितनी आयु बीतने पर आता है	• $3\times\frac{2}{3}=2$ • 6558 + 2 = 6560	$3\times\frac{1}{3}=1$

आयु बंध – कुछ नियम

इन 8 अपकर्ष काल में कितने ही जीव 8 बार, कितने 7 बार, कितने 6, 5, 4, 3, 2, 1 बार आयु बाधते हैं ।

इन अपकर्ष कालों में जीव आयु बंध के योग्य होता है । परन्तु इनमें आयु बंधेगी ही, ऐसा नियम नहीं है।

सभी अपकर्षों में एक समान गति संबंधी आयु बध होता है ।

प्रतिसमय बधने वाले कर्मों का 7 कर्मों में विभाजन होता है । आयु बधते समय अंतर्मुहूर्त काल के लिए 8 कर्मों में विभाजन होता है ।

अपकर्षों का अल्प-बहुत्व

आठों अपकर्ष में आयु बांधने वाले जीव सबसे कम हैं ।

उनसे संख्यात गुणे सात अपकर्ष में आयु बांधने वाले जीव हैं ।

उनसे संख्यात गुणे छः अपकर्ष में आयु बांधने वाले जीव हैं ।

ऐसे केवल एक अपकर्ष में आयु बांधने वाले जीव तक लगाना चाहिए ।

यदि इन अपकर्ष कालों में आयु का बंध नहीं हुआ तो क्या होगा?

असंक्षेपाद्धा

अ + संक्षेप + अद्धा

इससे संक्षेप (हीन) नहीं है आबाधा का अद्धा याने काल ।

अर्थात् इतने काल से कम आयु की आबाधा नहीं होती

अर्थात् इतना मात्र काल शेष रहने पर आयु का बंध होता ही है ।

असंक्षेपाद्धा

असंक्षेपाद्धा काल

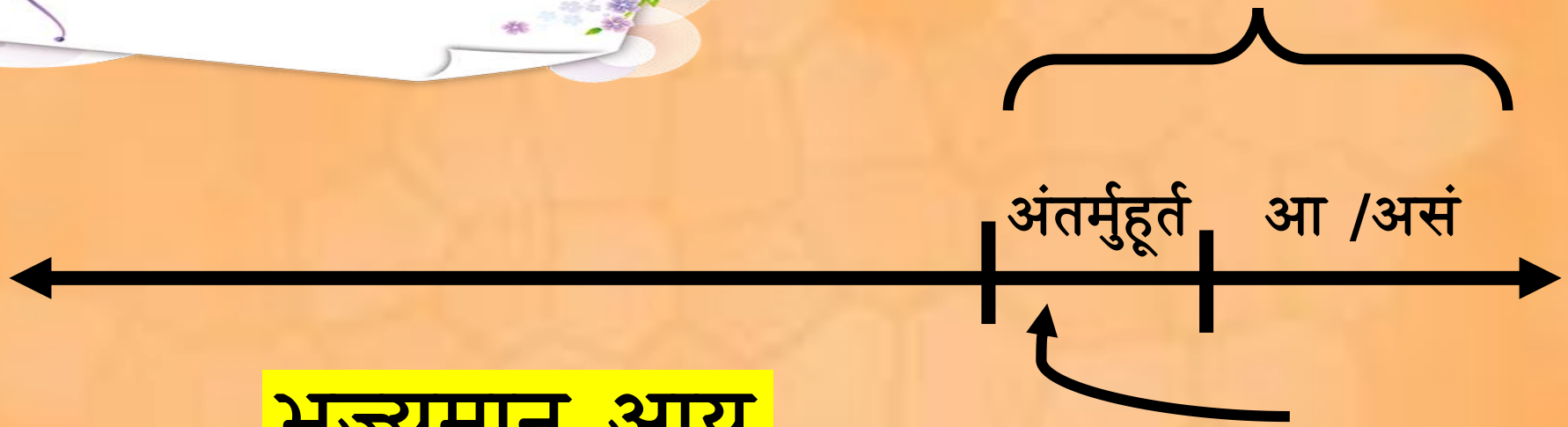

भुज्यमान आयु

यहाँ आयु का बंध होगा, जिसने अभी तक आयु बंध नहीं किया है ।

आबाधा

कर्म का बन्ध हो जाने के पश्चात् वह तुरंत ही उदय में नहीं आता,

बल्कि कुछ काल पश्चात् परिपक्व दशा को प्राप्त होकर ही उदय आता है।

इस काल को आबाधाकाल कहते हैं।

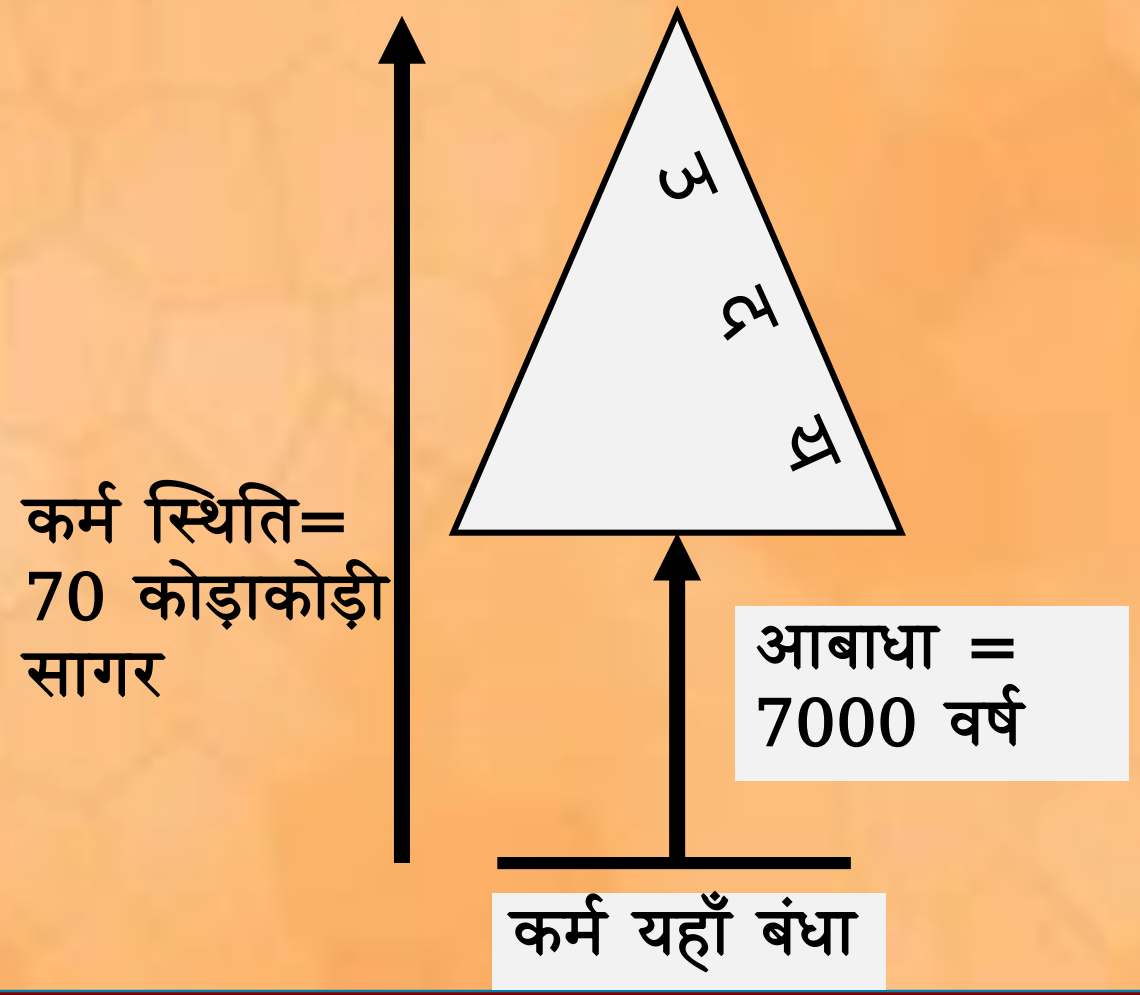

सोपक्रमायुष्क जीव का आयु बंध

सामान्य मरण होने पर

कदलीघात मरण होने पर

8 अपकर्ष में

असंक्षेपाद्धा में

असंक्षेपाद्धा में ही

सेसट्ठारस अंसा, चउगइगमणस्स कारणा होंति।
सुक्कुक्कस्संसमुदा, सव्वट्ठं जांति खलु जीवा॥519॥

⌘ अर्थ - अपकर्षकाल में होने वाले लेश्याओं के आठ मध्यमांशों को छोड़कर बाकी के अठारह अंश चारों गतियों के गमन के कारण होते हैं, यह सामान्य नियम है परन्तु विशेष यह है कि शुक्ललेश्या के उत्कृष्ट अंश से संयुक्त जीव मरकर नियम से सर्वार्थसिद्धि को जाते हैं ॥519॥

अवरंसमुदा होंति, सदारदुगे मज्झिमंसगेण मुदा।
आणदकप्पादुवरिं, सव्वट्ठाइल्लगे होंति॥520॥

⌘ अर्थ - शुक्ललेश्या के जघन्य अंशों से संयुक्त जीव मरकर शतार, सहस्रार स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं और मध्यमांशों करके सहित मरा हुआ जीव सर्वार्थसिद्धि से पूर्व के तथा आनत स्वर्ग से लेकर ऊपर के समस्त विमानों में से यथासंभव किसी भी विमान में उत्पन्न होता है और आनत स्वर्ग में भी उत्पन्न होता है ॥520॥

शुक्ल लेश्या से मृत जीव की गति

उत्कृष्ट

सर्वार्थसिद्धि

मध्यम

आनत स्वर्ग से लेकर अपराजित अनुत्तर विमान पर्यन्त

जघन्य

शतार-सहस्त्रार कल्प (11-12 स्वर्ग)

पम्मुक्कस्संसमुदा, जीवा उवजांति खलु सहस्सारं।
अवरंसमुदा जीवा, सणक्कुमारं च माहिंदं॥521॥

⌘ अर्थ - पद्मलेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव नियम से सहस्रार स्वर्ग को प्राप्त होते हैं और पद्मलेश्या के जघन्य अंशों के साथ मरे हुए जीव सानत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग को प्राप्त होते हैं ॥521॥

पद्म लेश्या से मृत जीव की गति

उत्कृष्ट

सहस्रार स्वर्ग
(12वां स्वर्ग)

मध्यम

ब्रह्म स्वर्ग से
शतार स्वर्ग
पर्यन्त
(5 से 11वां
स्वर्ग)

जघन्य

सानत् कुमार -
माहेन्द्र
(3-4था स्वर्ग)

मज्झिमअंसेण मुदा, तम्मज्झं जांति तेउजेट्ठमुदा।
साणक्कुमारमाहिंदंतिमचक्किंदसेढिम्मि॥522॥

- अर्थ - पद्मलेश्या के मध्यम अंशों के साथ मरे हुए जीव सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्ग के ऊपर और सहस्रार स्वर्ग के नीचे-नीचे तक विमानों में उत्पन्न होते हैं।
- पीत लेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्ग के अन्तिम पटल में जो चक्रनाम का इन्द्रकसंबंधी श्रेणीबद्ध विमान है उसमें उत्पन्न होते हैं ॥522॥

अवरंसमुदा सोहम्मीसाणादिमउडम्मि सेढिम्मि।
मज्झिमअंसेण मुदा, विमलविमाणादिबलभद्दे॥523॥

- अर्थ - पीतलेश्या के जघन्य अंशों के साथ मरा हुआ जीव सौधर्म-ऐशान स्वर्ग के ऋतु (ऋजु) नामक इन्द्रक विमान में अथवा श्रेणीबद्ध विमान में उत्पन्न होता है।
- पीत लेश्या के मध्यम अंशों के साथ मरा हुआ जीव सौधर्म-ऐशान स्वर्ग के दूसरे पटल के विमल नामक इन्द्रक विमान से लेकर सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्ग के द्विचरम पटल के (अंतिम पटल से पूर्व पटल के) बलभद्र नामक इन्द्रक विमान पर्यन्त उत्पन्न होता है ॥523॥

पीत लेश्या से मृत जीव की गति

उत्कृष्ट

सानत्कुमार-माहेन्द्र का अन्तिम पटल

मध्यम

सौधर्म-ऐशान के दूसरे पटल से सानत्कुमार-माहेन्द्र के द्विचरम पटल तक

जघन्य

सौधर्म-ऐशान स्वर्ग का पहला पटल

किण्हवरंसेण मुदा, अवधिट्ठाणम्मि अवरअंसमुदा।
पंचमचरिमतिमिस्से, मज्झे मज्झेण जायंते॥524॥

- अर्थ - कृष्णलेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव सातवीं पृथ्वी के अवधिस्थान नामक इन्द्रक बिल में उत्पन्न होते हैं।
- जघन्य अंशों के साथ मरे हुए जीव पाँचवीं पृथ्वी के अंतिम पटल के तिमिश्र नामक इन्द्रक बिल में उत्पन्न होते हैं।
- कृष्णलेश्या के मध्यम अंश सहित मरने वाले जीव अवधिस्थान इन्द्रक के चार श्रेणीबद्ध बिलों में या छठी पृथ्वी के तीनों पटलों में या पाँचवीं पृथ्वी के चरम यानी अंतिम पटल में यथायोग्य उपजते हैं ॥524॥

कृष्ण लेश्या से मृत जीव की गति

उत्कृष्ट

7वें नरक के इन्द्रक बिल में

मध्यम

7वें नरक के 4 श्रेणीबद्ध बिलों में

6वें नरक के 3 पटलों में

5वें नरक के चरम पटल में

जघन्य

5वें नरक के चरम पटल के इन्द्रक बिल में

नीलुक्कस्संसमुदा, पंचम अधिंदयम्मि अवरमुदा।
बालुकसंपज्जलिदे, मज्झे मज्झेण जायंते॥525॥

- अर्थ - नीललेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव पाँचवीं पृथ्वी के द्विचरम पटलसंबंधी अंध्रनामक इन्द्रकबिल में उत्पन्न होते हैं। कोई-कोई पाँचवें पटल में भी उत्पन्न होते हैं। इतना विशेष और भी है कि कृष्णलेश्या के जघन्य अंशवाले जीव भी मरकर पाँचवीं पृथ्वी के अंतिम पटल में उत्पन्न होते हैं।
- नीललेश्या के जघन्य अंशवाले जीव मरकर तीसरी पृथ्वी के अंतिम पटल संबंधी संप्रज्वलित नामक इन्द्रकबिल में उत्पन्न होते हैं।
- नीललेश्या के मध्यम अंशोंवाले जीव मरकर तीसरी पृथ्वी के संप्रज्वलित नामक इन्द्रकबिल के नीचे और पाँचवीं पृथ्वी के अंध्रनामक इन्द्रकबिल के पहले-पहले जितने पटल और इन्द्रक है उनमें यथायोग्य उत्पन्न होते हैं ॥525॥

नील लेश्या से मृत जीव की गति

उत्कृष्ट

5वें नरक का द्विचरम एवं चरम पटल

मध्यम

5वें नरक के प्रथम 3 पटल

4थे नरक के 7 पटल

जघन्य

तीसरे नरक का अंतिम पटल

वरकाओदंसमुदा, संजलिदं जांति तदियणिरयस्स।
सीमंतं अवरमुदा, मज्झे मज्झेण जायंते॥526॥

- अर्थ - कपोतलेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव तीसरी पृथ्वी के नौ पटलों में से द्विचरम - आठवें पटलसंबंधी संज्वलित नामक इन्द्रकबिल में उत्पन्न होते हैं। कोई-कोई अंतिमपटलसंबंधी संप्रज्वलित नामक इन्द्रकबिल में भी उत्पन्न होते हैं।
- कपोतलेश्या के जघन्य अंशों के साथ मरे हुए जीव प्रथम पृथ्वी के सीमन्त नामक प्रथम इन्द्रकबिल में उत्पन्न होते हैं और
- मध्यम अंशों के साथ मरे हुए जीव प्रथम पृथ्वी के सीमान्त नामक प्रथम इन्द्रक बिल से आगे और तीसरी पृथ्वी के द्विचरम पटलसंबंधी संज्वलित नामक इन्द्रकबिल के पहले तीसरी पृथ्वी के सात पटल, दूसरी पृथ्वी के ग्यारह पटल और प्रथम पृथ्वी के बारह पटलों में या घम्मा भूमि के तेरह पटलों में से पहले सीमान्तक बिल के आगे सभी बिलों में यथायोग्य उत्पन्न होते हैं ॥526॥

कपोत लेश्या से मृत जीव की गति

उत्कृष्ट

तीसरे नरक का द्विचरम एवं चरम पटल

मध्यम

तीसरे नरक के प्रथम 7 पटल

दूसरे नरक के 11 पटल

प्रथम नरक के दूसरे पटल से 12 पटल

जघन्य

प्रथम नरक का प्रथम पटल

किण्हचउक्काणं पुण, मज्झंसमुदा हु भवणगादितिये।
पुढवीआउवणप्फदि-जीवेसु हवंति खलु जीवा॥527॥

- अर्थ - पुनः अर्थात् यह विशेष है कि कृष्ण, नील, कपोत इन तीन लेश्याओं के मध्यम अंश सहित मरनेवाले कर्मभूमिया मिथ्यादृष्टि तिर्यंच और मनुष्य तथा पीतलेश्या के मध्यम अंश सहित मरने वाले भोगभूमिया मिथ्यादृष्टि तिर्यंच और मनुष्य वे भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी देवों में उपजते हैं।
- पुनश्च कृष्ण, नील, कपोत, पीत इन चार लेश्याओं के मध्यम अंश सहित मरने वाले ऐसे तिर्यंच और मनुष्य तथा भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी और सौधर्म-ऐशान के वासी देव, मिथ्यादृष्टि, वे बादर पर्याप्त पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, प्रत्येक वनस्पतिकायिक में उपजते हैं। भवनत्रयादिक की अपेक्षा यहाँ पीतलेश्या जाननी। तिर्यंच, मनुष्य की अपेक्षा कृष्णादि तीन लेश्या जाननी ॥527॥

ये जीव	इन लेश्या से मरणकर	यहा उत्पन्न होते हैं
कर्मभूमिया मिथ्यादृष्टि मनुष्य-तिर्यंच	3 अशुभ लेश्याओं के मध्यम अंश से	भवनत्रिक
भोगभूमिया मिथ्यादृष्टि मनुष्य-तिर्यंच	पीत लेश्या के मध्यम अंश से	
मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच	3 अशुभ लेश्याओं से	बादर पर्याप्त पृथ्वी-जल-प्रत्येक वनस्पति
भवनत्रिक, सौधर्म-ऐशान	पीत लेश्या से	बादर पर्याप्त पृथ्वी-जल-प्रत्येक वनस्पति

किण्हतियाणं मज्झिम-अंसमुदा तेउआउ वियलेसु।
सुरणिरया सगलेस्सहिं, णरतिरियं जांति सगजोग्गं॥528॥

- अर्थ - कृष्ण, नील, कपोत के मध्यम अंश सहित मरनेवाले तिर्यंच और मनुष्य वे अग्निकायिक, वायुकायिक, विकलत्रय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, साधारण वनस्पति इनमें उपजते हैं।
- पुनश्च भवनत्रय आदि सर्वार्थसिद्धि तक के देव और धम्मादि सात पृथ्वियों के नारकी अपनी-अपनी लेश्या के अनुसार यथायोग्य मनुष्यगति या तिर्यंचगति को प्राप्त होते हैं।
- यहाँ इतना जानना कि जिस गति संबंधी पहले आयु बाँधी हो जैसे मनुष्य के पहले देवायु का बंध हुआ और यदि मरण के समय कृष्णादि अशुभलेश्या हो तो भवनत्रिक में ही उपजता है, ऐसे ही अन्यत्र जानना ॥528॥

ये जीव	इन लेश्या से मरणकर	यहा उत्पन्न होते हैं
तिर्यंच, मनुष्य	3 अशुभ लेश्या	तेज, वायु, विकलत्रय, असैनी, साधारण वनस्पति, सूक्ष्म तिर्यंच, अपर्याप्त
सर्व देव	अपनी-अपनी शुभ लेश्या के अनुसार	यथायोग्य मनुष्य और तिर्यंच गति में
नारकी	अपनी-अपनी अशुभ लेश्या के अनुसार	यथायोग्य मनुष्य और तिर्यंच गति में

नोट— मरण होते समय जैसी लेश्या हो, वैसी गति में चला जाता है । जैसे देवायु का बंध होने पर भी मरणसमय अशुभ लेश्या होने पर भवनत्रिक में जाता है ।

काऊ काऊ काऊ, णीला णीला य णीलकिण्हा य।
किण्हा य परमकिण्हा, लेस्सा पढमादिपुढवीणं॥529॥

⌘ अर्थ - पहली रत्नप्रभा पृथ्वी में कपोतलेश्या का जघन्य अंश है।

⌘ दूसरी शर्कराप्रभा पृथ्वी में कपोत लेश्या का मध्यम अंश है।

⌘ तीसरी बालुकाप्रभा पृथ्वी में कपोत लेश्या का उत्कृष्ट अंश और नील लेश्या का जघन्य अंश है।

⌘ चौथी पंकप्रभा पृथ्वी में नील लेश्या का मध्यम अंश है।

⌘ पाँचवीं धूमप्रभा पृथ्वी में नील लेश्या का उत्कृष्ट अंश और कृष्ण लेश्या का जघन्य अंश है।

⌘ छठी तमप्रभा पृथ्वी में कृष्ण लेश्या का मध्यम अंश है।

⌘ सातवीं महातमप्रभा पृथ्वी में कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट अंश है ॥529॥

- Reference : गोम्मटसार जीवकाण्ड, सम्यग्ज्ञान चंद्रिका, गोम्मटसार जीवकांड - रेखाचित्र एवं तालिकाओं में

Presentation developed by

Smt. Sarika Vikas Chhabra

- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889